चन्दामामा

मा-बच्चों का मासिक पत्र

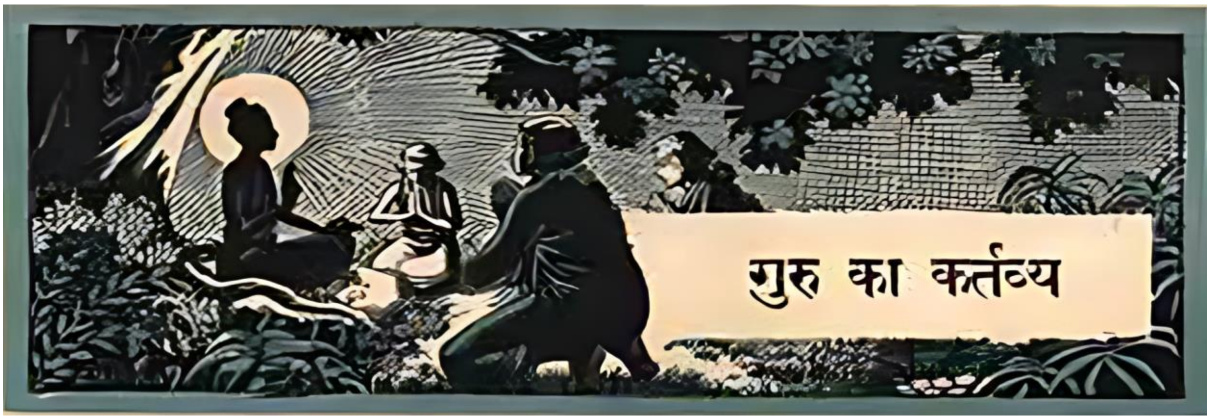

काशी के राजा ब्रह्मदत्त के जमाने में, बोधिसत्व तक्षशिला में एक प्रसिद्ध शिल्पाचार्य के रूप में पैदा हुए। उनके पास मूर्तिकला, व अन्य कलाओं का अभ्यास करने देश के चारों कोनों से अनेक विद्यार्थी आया करते थे।

तक्षशिला के शिल्पाचार्य की कीर्ति सुनकर काशी के राजा ने अपने लड़के को उनके पास विद्याभ्यास करने के लिए भेजने का निश्चय किया।

राजकुमार अभी पूरा सोलह वर्ष का भी न था। उसका अकेला तक्षशिला जाना, वहाँ जाकर गुरु की सेवा-शुश्रूषा कर विद्याभ्यास करना, मन्त्री, सामन्त आदि को न भाया। इसलिए राजा को उन्होंने सलाह दी- "महाराज! क्या हमारे नगर में शिल्प विद्या में पारङ्गत प्रवीण नहीं हैं? राजकुमार को अकेले ही तक्षशिला क्यों भेजा जाय? यह हमको ठीक नहीं लग रहा है।"

राजा को यह सलाह पसन्द न आई। क्योंकि वह जब तक राजकुमार माना जाता, और राज महल नहीं छोड़ता, तब तक वह कुछ सीख न पाता। दूर देश जाकर वहाँ साधारण विद्यार्थी की तरह गुरु की देखरेख में विद्या सीखने से ही आदमी कुछ जान-सीख सकता था।

इसलिये राजा ने पतले चमड़े की बनी पादुकाएँ, और ताड़ के पत्ते की बनी छतरी मात्र राज कुमार को देकर कहा-"तू तक्षशिला जाकर, शिल्पाचार्य के यहाँ अच्छी तरह विद्याभ्यास कर। जब उनके यहाँ शिक्षा समाप्त हो जाय, तब घर वापिस आना। उनको गुरु दक्षिणा देने के लिए हज़ार चान्दी की मुहरें भी साथ ले जा।"

राजकुमार पिता के कथनानुसार तक्षशिला गया। वहाँ शिल्पाचार्य से मिला। उसने अपना उद्देश्य भी उनके सामने व्यक्त किया। हज़ार चान्दी के मुहरों की गुरु दक्षिणा देकर, वह उनके पास विद्याभ्यास करने लगा। राज कुमार की शिल्प शिक्षा यथा नियम प्रारम्भ हुई। उसकी बुद्धिमत्ता देखकर गुरु भी सन्तुष्ट हुए।

कुछ समय बीता। गुरु-शिष्य, सवेरे सवेरे, नियमित रूप से रोज नगर के बाहरबाली नदी में स्नान करने जाया करते। एक दिन, जब वे स्नान कर रहे थे, तो एक बुढ़िया कुछ तिल लेकर वहाँ आयी। उसने उनको पानी में साफ़ किया और नदी किनारे, चादर बिछाकर उस पर उन्हें सुखाने लगी। राज कुमार ने यह देखा। जल्दी से स्नान कर, बुढ़िया को इधर उधर देखता पा, जल्दी से उसने मुट्ठी भर तिल उठाये और मुख में डाल लिये।

यद्यपि बुढ़िया ने यह देख लिया था, तो भी उसने किसी से कुछ न कहा।

अगले दिन भी, राज कुमार ने यही काम किया। तीसरे दिन भी यही किस्सा जारी रहा। लड़के की चोरी की आदत बढ़ती देखकर बुढ़िया को गुस्सा आ गया। जब शिल्पाचार्य स्नान समाप्त कर, किनारे पर आये, तो उसने कहा-"देखिये! तीन दिन से लगातार आपका शिष्य मेरे तिल चुराकर खा रहा है। मुझे इसकी फिक्र नहीं कि उसने मेरे तिल खाये हैं, पर मैं यह नहीं चाहती कि उसकी चोरी की आदत बने और आपकी कीर्ति में भद्दा लगे। आप उसे ऐसा दण्ड दीजिये, ताकि फिर वह ऐसा काम न करे।"

शिल्पाचार्य ने घर पहुँचते ही, राजकुमार की पीठ पर तीन बार बेंत लगाकर

कहा-"निषिद्ध कार्य करने की यह तुम्हें सजा है। फिर कभी ऐसा काम न करना।"

राजकुमार को गुरु पर बहुत क्रोध आया। परन्तु वह राज कुमार तो काशी में था, यहाँ तो वह एक साधारण विद्यार्थी ही था। यहाँ वह कुछ न कर सकता था। गुरु को उसको दण्ड देने का अधिकार था।

"जब मैं राजा बनूँगा, तो इस दुष्ट को किसी बहाने काशी बुलाऊँगा और इसकी खूब ख़बर लूँगा। अब तो लाचारी है; कुछ नहीं किया जा सकता।" राज कुमार ने क्रोध में सोचा।

कालक्रम से, राज कुमार की शिक्षा समाप्त हुई। काशी जाने से पहले, उसने गुरु को नमस्कार कर, उनका आशीर्वाद पाया। तब उसने गुरु से कहा-"गुरूजी! मेरे राजा बनने के बाद, आप जरूर एक बार काशी आइये। तब मैं आपका यथोचित सत्कार करूँगा।"

काशी राज्य पहुँचने के थोड़े दिनों बाद, राज कुमार का पट्टाभिषेक हुआ। एक दिन उसको अपने गुरु की याद आई। तुरन्त उसने एक नौकर को बुलाकर कहा-"तुम

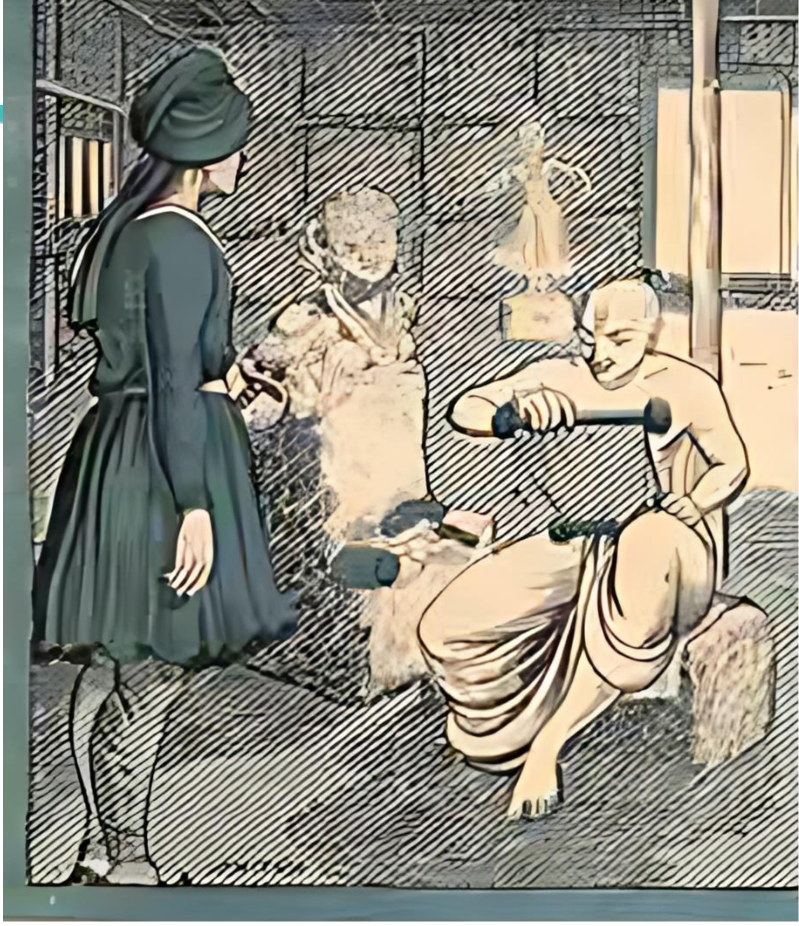

तक्षशिला जाओ। वहाँ शिल्पाचार्य से मिलकर उनको यह निमन्त्रण पत्र दो।"

निमन्त्रण पत्र के मिलने पर भी, शिल्पाचार्य काशी के लिये तुरन्त नहीं रवाना हुए। "राजकुमार अभी अभी राजा बना है, इसलिये उसी मस्ती में होगा। जब वह राज्य की जिम्मेवारी जानने लगेगा, तभी जाना अच्छा है।" शिल्पाचार्य ने सोचा।

कुछ दिनों बाद, शिल्पाचार्य, काशी में अपने शिष्य को देखने गये। राजा के गुरु आये हैं, यह सोचकर दरबारियों ने उनको उच्च आसन पर बिठाया, और उनका अच्छा आदर-सत्कार भी किया।

गुरु को देखते ही, राजा का पुराना क्रोध फिर जाग उठा। वह आग बबूला हो रहा था। उनकी बात को काटते हुए, उसने गुरु के मुँह की ओर देखते हुए पूछा-" जिसने मुट्ठी भर तिल चुराने के लिए दण्ड दिया हो, उसको अपने पञ्जे में पा, कभी छोड़ा जाता है?" दरबारियों के बिना जाने, शिल्पाचार्य के मन में मौत का डर पैदा कर, किसी न किसी प्रकार राजा उन्हें मारकर अपना बदल लेना चाहता था।

परन्तु शिल्पाचार्य घबराये नहीं। और तो और, उन्होंने राजा का रहस्य भरे दरबार में सबको बता दिया।

"राजा! जब तुम मेरे यहाँ शिष्य थे, तुमने वह कार्य किया, जो तुम्हें नहीं करना चाहिये था। यह गुरु का कर्तव्य है कि शिष्य को, दुर्व्यवहार के लिए यथोचित दण्ड दे और उसको सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करे। यदि मैंने उस दिन तुम्हें दण्ड़ न दिया होता तो तुम आज राजा होने के बदले चोर हुए होते। बुद्धिमान गलती पर दण्ड देनेवालों पर गुस्सा नहीं करते। वे उनके प्रति कृतज्ञता दिखाते हैं।" शिल्पाचार्य ने कहा।

दरबारियों को सब कुछ मालूम हो गया। राजा को नीचा देखना पड़ा। वह सिंहासन से उतर पड़ा और गुरु के चरणों पर पड़कर कहने लगा-"मैं ग़लत रास्ते पर जा रहा था। आप मुझे सही रास्ते पर लाये, इसके लिये मैं कृतज्ञ हूँ। मुझे माफ़ कीजिए।"

राजा की इच्छानुसार शिल्पाचार्य, तक्षशिला से आकर, काशी में ही रहने लगे और राजपण्डित के पद से राजा का पथ-प्रदर्शन करने लगे।

[९]

[शिवदत्त जब सुरङ्ग से बाहर निकल रहा था, तब नरवाहन के सैनिकों ने उसके दूसरे सिरे को घेर लिया। बाद में, शिवदत्त के सिपाहियों में और उनमें युद्ध हुआ। शिवदत्त के कई सिपाही मारे भी गये। तब शत्रुओं के सरदार को शिवदत्त ने ठण्डा कर दिया। सरदार को मरा पा, सैनिक मैदान छोड़कर भाग गये। बाद में...]

"शिवदत्त! शुरू से ही भाग्य तुम्हारे साथ रहा, वरना तुम इतनी मुसीबतों में से सही-सलामत न निकल पाते।" मन्दरदेव ने शिवदत्त की तरफ देखते हुए कहा।

शिवदत्त ने हँसकर कहा-"इसमें कोई सन्देह की बात नहीं। मैंने कभी अनुमान भी न किया था कि गुप्त मार्ग के परली तरफ इतने सारे दुश्मन हमारी इन्तज़ार कर रहे होंगे। परन्तु जब मैंने सौभाग्य से उनके सरदार को अपनी तलवार का शिकार बना दिया, तो नरवाहन के बाकी सैनिकों को ख़तम कर देने में कुछ देरी न लगी। परन्तु बाद में मुझे मालूम हुआ कि पेड़ों की आड़ में छुप छुपाकर दो-चार शत्रु भाग निकले थे। नहीं तो वे भी नहीं बच पाते।

घोड़े पर से गिरे दुश्मन को मैंने बाहर निकलवाया। घोड़ा मौत के मुँह में पड़ा, इधर उधर पैर पटक रहा था। शत्रु भी उसके पैरों की चोट से काफी घायल हो गया था।

वह अब और तब मरने को था। उसके मुख में थोड़ा पानी डाला। जो बात मैं जानना चाहता था, वह उसी के द्वारा जानी जा सकती थी। और कोई मुझे यह जानकारी न दे पाता।

प्यास बुझाकर, जब उस सैनिक ने लम्बी साँस ली, तो मैने उससे समरसेन के बारे में पूछा-"क्या अभी वे जिन्दा हैं, या मर गये हैं?" यही प्रश्न मैंने उससे पूछा था।

दर्द के कारण कराहते उस सैनिक ने मेरी तरफ दयनीय शक्ल बनाते हुए कहा-"समरसेन के मरे हुए चार-पाँच घण्टे हुए होंगे। अब इस द्वीप का राजा नरवाहन है।"

"तो क्या यह सच है कि युद्ध में समरसेन घायल हो गया था?" मैने पूछा। "सच है....." कहते कहते, उसका गला एक तरफ झुक गया और उसने आँखें मूँद ली।

"महासेनानी अब नहीं हैं।" यह सोचकर मुझे ऐसे लगता था, जैसे मेरे दिल पर कई चट्टानें यकायक गिर गई हो। वे महावीर थे, और महावीर की मौत ही मरा। इसमें अफ़सोस करने की ऐसी बड़ी बात न थी। उसकी आत्मा की शान्ति के लिए परमात्मा से प्रार्थना की।

अब हमें क्या करना चाहिये था? कुण्डलिनी देवी की कृपा से, हम सुरक्षित सुरङ्ग में से निकल आये थे। हमें उतनी मुसीबतें नहीं झेलनी पड़ी थीं, जितनी कि मैने कल्पना की थी। दुश्मनों से मुकाबला करते हुए मेरे छः अनुयायी मारे गये। अगर मैं झट अपने आदमियों के साथ जङ्गल में न भागता तो नरवाहन के और सिपाहियों का वहाँ आने का खतरा था।

मैंने अपने सिपाहियों को एक जगह इकट्ठा कर उनको वास्तविक परिस्थिति समझाई। उन सब ने यह माना कि आज, नहीं तो कभी न कभी, इस द्वीप को छोड़कर जाना ही होगा। समरसेन की मृत्यु के बाद इस द्वीप में नरवाहन से लोहा लेने के लिए न किसी के पास हौसला था, न शक्ति ही।

मृत छः सिपाहियों की एक ही समाधि बनाकर अपने सिपाहियों को लेकर, मैं पास वाले घने जङ्गल की ओर चला। दो-तीन कोस चलने के बाद हमें जङ्गलियों का एक गाँव मिला। सैनिकों की पोशाक में, हथियार लिये हुए हमें देखते ही, उस गाँव के बड़े, बच्चे हमारे चारों ओर इकट्ठे हो गये। "इस गाँव में तुम्हारा मुखिया कौन है? उससे बातचीत करनी है?" मैंने उनसे पूछा। दो-चार मिनट में एक बूढ़ा हमारे पास आया। उसने आते ही पूछा-"आप कौन हैं यहाँ किस काम पर आये हैं?"

मैंने अपने सिपाहियों को दिखाते हुए कहा-"ये सब बहुत थक गये हैं। कल से कुछ खाया भी नहीं है। क्या आप हमारी कुछ मदद कर सकते हैं?"

मेरी बात सुनते ही, वृद्ध और जङ्गलियों की तरफ देखने लगा। उसका देखना था कि एक एक जङ्गली, एक एक सिपाही को, अपने घर खिलाने-पिलाने ले गया। इन जङ्गली जातियों का आतिथ्य सत्कार देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। वृद्ध ने मेरी तरफ देखकर कहा- "आइये, आप हमारे घर आइये। आप के खाने-पीने का मैं इन्तजाम करूँगा।"

मैं वृद्ध के साथ उसके घर गया। आध एक घण्टे में, मुझे अच्छे से अच्छा भोजन परोसा गया। भोजन समाप्त होने तक

बृद्ध ने मुझसे किसी तरह की बातचीत न की। परन्तु मैं यह जान गया था कि उसकी अङ्गारे जैसी आँखें मुझे लगातार घूर घूरकर देख रही थीं।

"हम जङ्गली हैं। ये जङ्गल ही हमारे माल मिल्कियत हैं। न हमने, न हमारे पुरखों ने, किसी राजा महाराजा के सामने सिर झुकाया है।" वृद्ध ने कहा।

मैंने सिर हिला दिया, कुछ कहा नहीं। वह क्या कहना चाह रहा था, में अच्छी तरह न जान सका। मैं देखता रहा।

"देश में कैसी कैसी खतरनाक घटनायें घट रही हैं, हमें अवसर मालूम होती रही हैं। आप में से कईयों ने, हमारे नौजवानों को, खूब ललचा उकसा कर अपनी अपनी तरफ मिलाने की भी कोशिश की है। जङ्गलियों के सरदार के तौर पर मैंने अब तक उनकी दाल न गलने दी। सैनिकों की पोशाक पहनकर आपका इस जङ्गल में आने का मतलब क्या है?" वृद्ध ने सीधा प्रश्न पूछा।

तब मुझे मालूम हुआ कि उसके मन में क्या सन्देह काम कर रहा था। उसका

सन्देह हटाने के लिए, मैने यह जरूरी समझा कि उसको शुरू से अन्त तक, युद्ध का घटनावार ब्योरा बताया जाय। समरसेन के बारे में, उनको, हमारे मन्त्रिकों के द्वीप से कैसे परिचय हुआ, उनके कुण्डलिनी द्वीप में आने के बाद हुए देश में परिवर्तन, आखिर नरवाहन का धोखा देना; यह सब मैंने दो-चार शब्दों में, वृद्ध को कह सुनाया। सब सुनने के बाद, उसने मुझे घूरते हुए पूछा-"तो इसका मतलब यह हुआ कि जिन्होंने राज्य हथिया लिया है, तुम उनके दुश्मन हो?"

"हाँ।" मैंने जवाब दिया।

वृद्ध सिर झुकाकर थोड़ी देर सोचता रहा। फिर उसने पूछा-"तो क्या आप लोग, जङ्गल में रहकर, मौके ब-मौके, उन लोगों पर हमला करने की सोच रहे हैं।"

"हमारा वह उद्देश्य तनिक भी नहीं है।" मैंने झट जवाब दिया।

मेरा जवाब सुनकर जङ्गलियों का सरदार बहुत खुश हुआ। चटाई पर से उठकर, मेरे दोनों हाथ पकड़कर उसने कहा-"अगर मेरे प्रश्न आपको बुरे लगे हों, तो

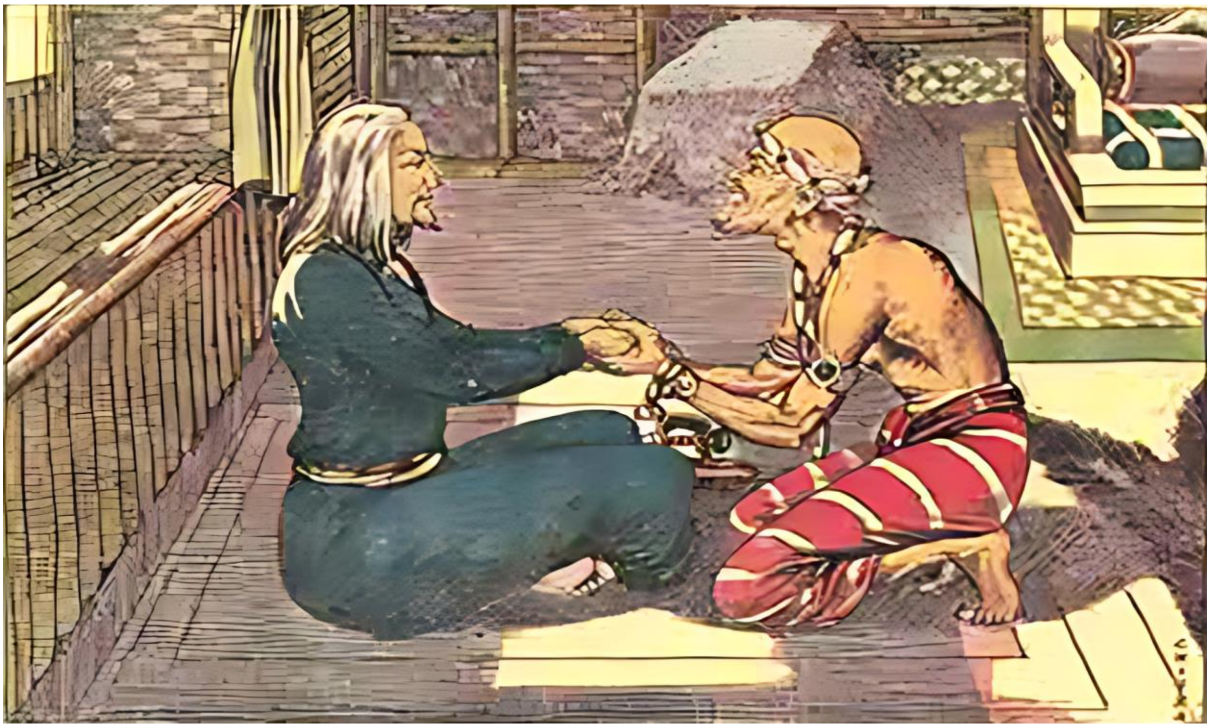

मुझे माफ़ कीजिये। अगर आप यह द्वीप छोड़कर जाना चाहें, तो मैं उसके लिए आपको जरूरी मदद दूँगा। मेरी इच्छा एक ही है कि आप इस शान्त जङ्गल में, हम लोगों के शान्त जीवन में गड़बड़ी न पैदा करें। अगर आप लोगों ने यहाँ से मौजूदा राजा के खिलाफ कोई भी विद्रोह किया तो उसके कारण इस सारे प्रान्त में खलबली मच जायेगी।"

उस दिन रात को अपने सिपाहियों को एक जगह इकट्ठा कर मैने सही हालत समझाई। वे सब मान गये कि नरवाहन के मालूम होने से पहिले ही, द्वीप को छोड़कर जाने में हमारी भलाई थी। पर हमने सोचा कुछ था, पर उस रात को हो कुछ और गया।

बराण्डे में, मैं और मेरे सिपाही सोने की तैयारी कर रहे थे। हमारी थोड़ी दूर पर जङ्गली नौजवान, जङ्गली जानवरों को डराने के लिए, आग जलाकर उसके चारों ओर सो रहे थे। आधी रात के समय, दूरी पर, ढोलों की आवाज़, और जङ्गल के जलने की ध्वनि सुनाई दी। दूर से कुछ रोशनी भी साफ़ साफ़ दिखाई दे रही थी।

वह जङ्गलियों की बस्ती मिनटों में सजग होकर खड़ी हुई। गाँव के बूढ़े सरदार ने नौजवानों को भाले और ढोल देकर, गाँव का पहरा देने के लिए नियुक्त किया। कुछ को मशालें देकर, जिस तरफ से ढोलों की आवाज़ आ रही थी, उस तरफ भेजा।

"यह क्या आवाज है?" मैंने वृद्ध से पूछा।

उसने ओंठ मींचकर खोलते हुए कहा-"कुछ भी हो सकता है। हो सकता है कि हाथी किसी बस्ती का सर्वनाश कर रहे हो। यह भी हो सकता है कि

कोई और जङ्गली जाति हम लोगों की थोड़ी बहुत सम्पत्ति पर हमला कर रही हो। पर मुझे एक बात पर अचरज हो रहा है।" बूढ़े ने आग की तरफ अँगुली उठाकर दिखाया।

"कहीं नरवाहन के सैनिकों का हमला तो नहीं है? यह सन्देह मेरे दिल में रह रहकर हो रहा है।" इतने में दो चार जङ्गली नवयुवक, जहाँ हम खड़े हुए थे, भागे भागे चिल्लाते आये। उन्होंने वृद्ध से कहा-"हमारी बस्तियों पर सैनिक हमला कर चीजों को तहस-नहस कर रहे हैं और घर-बार सर्वनाश कर रहे हैं। उनमें से कई जङ्गल जलाने में भी लगे हुए हैं।"

"इस तरह का उपद्रव पहिले कभी न हुआ। आखिर वे चाहते क्या है?" जङ्गलियों के वृद्ध सरदार ने पूछा।

इतने में वहाँ नरवाहन के एक सैनिक को, उसके हाथ बाँधकर जङ्गली ले आये। "हुजूर! इससे पूछिये। यह सब हाल बता देगा। यह जङ्गली प्रान्त, यह कहता है, उसके सरदार सुबाहु की मिल्कियत है।" कहते हुए उन्होंने सैनिक को दो बार भाले से भोका।

जङ्गलियों के वृद्ध सरदार ने थोड़ी देर मेरी तरफ देखा, और फिर उस सैनिक से पूछा-"क्या हमारे आदमी ठीक कह रहे हैं? तुम्हारे सरदार सुबाहु को यह सारा प्रान्त किसने दे डाला है?"

महाराज नरवाहन ने युद्ध में, हमारे सरदार सुबाहु की मदद के बदले यह सारा प्रान्त दान में दे दिया है। यहाँ रहनेवाले पशु-पक्षी, और मनुष्य, सब आज से उनके अधीन हैं। हम इस इलाके को अपने वश में करने के लिए ही यहाँ आये हैं।" सैनिक ने कहा।

(अभी और है)

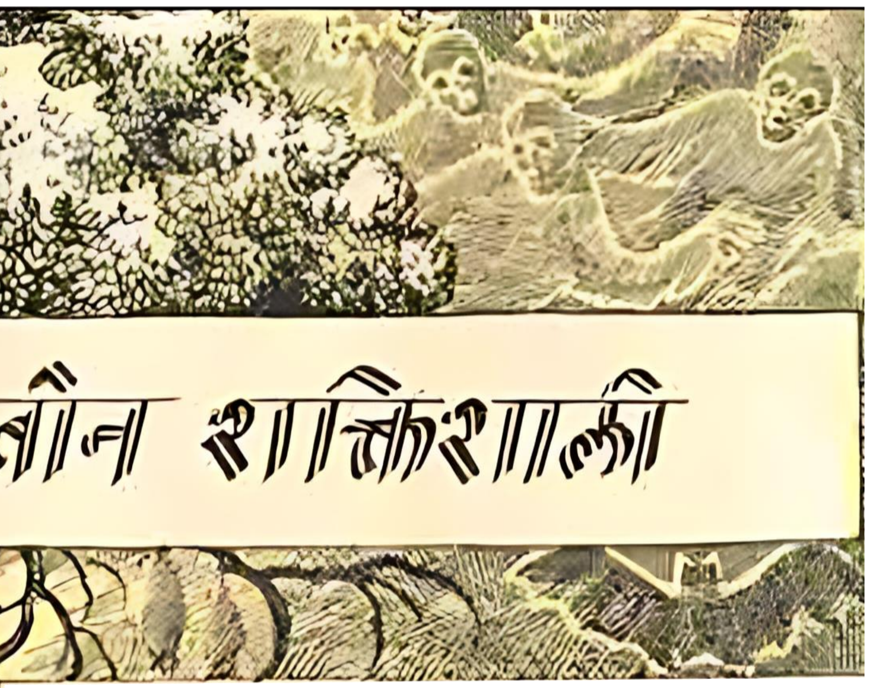

कौन शक्तिशाली

विक्रमार्क वापिस फिर पेड़ के पास गया, शव उतारकर कन्धे पर डाल, चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। वेताल ने राजा को इस तरह मेहनत करता देख, कहा-"तुम जैसे बलशाली को देखकर मुझे एक कहानी याद आ रही है। सुनो।" वह निम्नोक्त कहानी सुनाने लगा।

किसी जमाने में, एक रईस किसान के एक लड़का और तीन लड़कियाँ थीं। पिता ने तीन धनी युवकों से तीनों लड़कियों की शादी कर दी। लड़के का विवाह अभी न हुआ था।

छोटी बहनों की शादी के एक वर्ष बाद किसान का लड़का उनके घर-बार देखने निकला। पहले पहल वह बड़ी बहन के घर गया। "क्यों बहन! तुम और

तुम्हारे पति ठीक तो हैं?" उसने बहन से पूछा।

"क्या ठीक हैं? तुम्हारे बहनोई के पास पैसा तो बहुत है, पर काम-धाम कुछ नहीं है। वे बहुत बड़े तीरन्दाज़ हैं। मैं नहा-धोकर, टीका लगाकर बैठती हूँ कि वे तीर लेकर मेरे नथ को निशाना बनाकर, बाण छोड़ने लगते हैं। कहीं निशाना चूक कर बाण मुझे न लग जाये, इसी डर से मैं सूखी जा रही हूँ।" बहन ने कहा।

"यह बात है? मैं तुम्हारे पति को कुछ न कुछ काम दिखाऊँगा।" यह कह किसान का लड़का मञ्झली बहन को देखने गया। "क्यों बहन? तुम और तुम्हारे पति ठीक तो हैं?" उसने पूछा।

"क्या बताऊँ भैय्या! तुम्हारे बहनोई के पास पैसा तो बहुत है, पर करने धरने को कुछ नहीं है। उनमें दिव्य-दृष्टि है। तीनों लोकों में चाहे कुछ भी हो रहा हो, वे देख लेते हैं। दिन-रात इन्द्र-लोक में होनेवाले रम्भा और ऊर्वशी के नृत्यों को देखकर वे खुश होते रहते हैं; वे हमारी दुनियाँ में मानों रहते ही न हों।" मञ्झली बहन ने अपने भाई से कहा।

"तो यह बात है? मैं तुम्हारे पति को कोई काम दिखा दूँगा। घबराओ मत।" कहते हुये किसान का लड़का अपनी छोटी बहन को देखने गया।

"क्यों बहन! तुम और तुम्हारे पति ठीक तो हैं?" उसने अपनी छोटी बहन से पूछा।

"तुम्हारे बहनोई के पास पैसा है, मगर काम-काज कुछ नहीं है। वे वायु वेग से भाग सकते हैं। इसलिये वे घर में ही नहीं रहते हैं। सबेरे होते ही, वे काशी भाग जाते हैं, और बिश्वेश्वरालय में दीपाराधना करते हैं। वहाँ से भागकर वे रामेश्वर जाते हैं, और वहाँ भी पूजा करते हैं। उसके बाद, पूर्वी समुद्र में और पश्चिमी समुद्र में स्नान करके रात को घर वापिस आते हैं।" छोटी बहिन ने अपने भाई से कहा।

"तो यह बात है? मैं तुम्हारे पति के लिए कोई काम ढूँढूँगा। चिन्ता मत करो।" किसान का लड़का अपने घर चला गया। और अपने तीनों बहनोइयों को, उनकी पत्नियों के साथ घर आने के लिए खबर भिजवाई। वे सब आये भी।

किसान के लड़के ने बहनोइयों को एक जगह बिठाकर कहा-"आप तीनों बहुत शक्तिशाली हैं, पर आप अपनी शक्तियों का सदुपयोग नहीं कर रहे हैं। अगर महीने भर आप यात्रा करके चोल देश पहुँच सकें, तो वहाँ आपको अपनी शक्ति का उपयोग करने का अच्छा अवसर मिलेगा। आपकी शक्ति के बारे में संसार को मालूम हो जायगा।"

वे उसकी सलाह मान गये और तीनों थोड़े दिनों बाद चोल देश में पहुँचे। वहाँ जाते ही, उन्होंने एक बूढ़िया के यहाँ

बसेरा किया। उन्होंने बुढ़िया से पूछा-"क्यों माई जी! इस नगर में आजकल क्या हो रहा है?"

बुढ़िया ने आहें भरते हुए कहा-"हो क्या रहा है? हमारे राजा की लड़की, कह रही है कि वह उसी से शादी करेगी, जो देवलोक से उसको खिले हुए पारिजात पुष्प लाकर देगा; और किसी से नहीं। न जाने पारिजात पुष्प कहाँ है? कितनी दूर है! उनको मुरझाने से पहले कोई ला सकेगा कि नहीं? इसी फिक्र में हमारे राजा काँटे हो रहे हैं।"

तीनों शक्तिशाली, यह सुनकर सीधे राज महल में पहुँचे और राजा से उन्होंने कहा-"महाराज! सुना है, आपकी लड़की उसीसे शादी करेगी, जो खिले हुए पारिजात पुष्प को लाकर देगा। हम उसको लाकर देंगे।"

"और हमें क्या चाहिये? जाइये, पुष्प ले आइये।" राजा ने कहा।

वे तीनों नगर के बाहर गये। दिव्य-दृष्टि वाले ने चारों तरफ़ देखकर एक और इशारा किया। "इस दिशा में दो हजार योजन दूर पर एक जङ्गल के

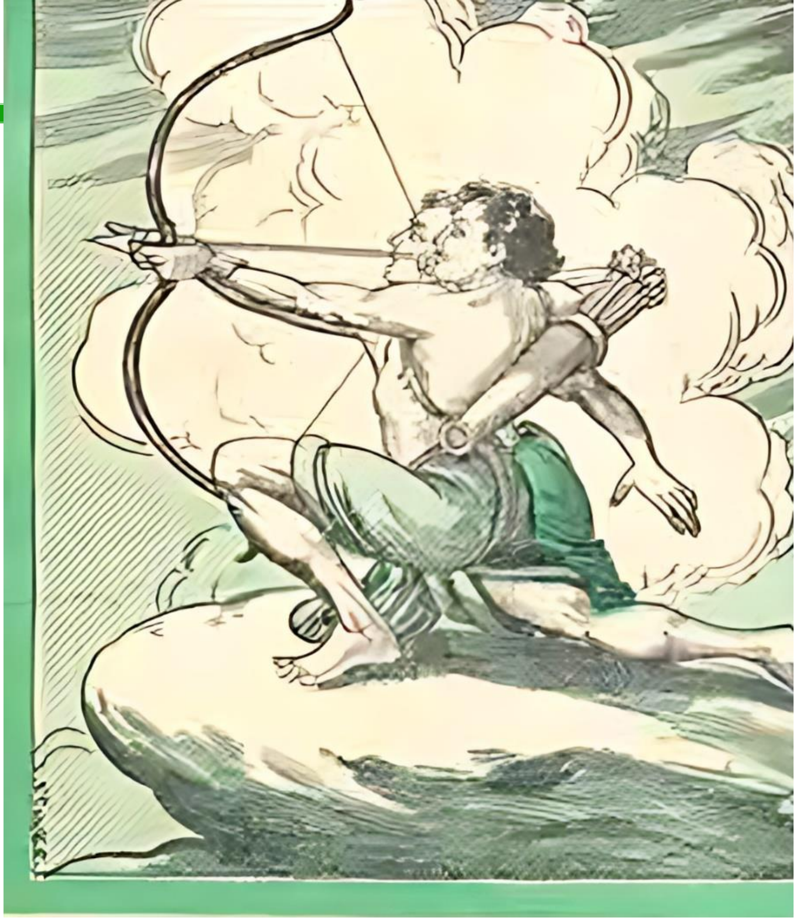

बाद, बहुत से पारिजात के वृक्ष हैं।" उसने कहा।

तुरन्त वायु-वेग से भागने वाला बहनोई उस तरफ भागा। वह यद्यपि भागते भागते अन्तर्धान-सा हो गया, पर दिव्य दृष्टिवाले उसको देखते हुए कहा-"अब वह पारिजात के बाग में पहुँच गया है और फूल तोड़ रहा है। पोटली बाँध रहा है। वापिस चल पड़ा है। जङ्गल में, आराम करने के लिये एक पेड़ के नीचे सो रहा है। अरे, अरे, शेर पास के पेड़ के थाल से उसे देख रहा है।"

"कहाँ है शेर? उँगली से दिखाओ, मैं उसे तुरन्त मार दूँगा।" तीरन्दाज ने कहा।

दिव्य-दृष्टि वाले ने शेर जिस तरफ था, उस तरफ उँगली दिखाई। झट तीरन्दाज़ ने निशाना बाँधकर तीर छोड़ दिया।

"बाण की चोट से शेर मर गया है। उसके गर्जन से वह उठ खड़ा हुआ है। आ रहा है। अब कोई डर नहीं है।" दिव्य दृष्टिवाले ने कहा।

थोड़ी देर बाद, वह व्यक्ति पारिजात पुष्प लेकर वापिस आ गया। तीनों मिलकर राजा के पास फूल ले गये। उन्होंने कहा-"महाराज! हम खिले हुए यह पारिजात पुष्प लाये हैं।" राजा हक्का-बक्का रह गया। "तुममें से इसे कौन लाया है?" उसने पूछा।

"दीख नहीं रहा है? हम तीनों ही लाये हैं।" उन तीनों ने कहा। राजा पशोपेश में पड़ गया। वह यह न निश्चय कर सका कि उन तीनों में से किसके साथ अपनी लड़की की शादी करे।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर राजा से कहा-"राजा! बताओ, उन तीनों में कौन राजकुमारी से शादी करने योग्य था। अगर तुमने जान-बूझकर इसका जवाब न बताया तो तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा।"

"राजकुमारी से विवाह करने के लिये तीनों ही योग्य न थे। यद्यपि वे शक्तिशाली थे, तो भी उनमें एक भी यह नहीं जानता था कि अपनी शक्ति का कैसे उपयोग करे। उनके साले ने ही शक्ति उपयोग करने का रास्ता दिखाया था। इसलिये वह ही राजकुमारी से शादी करने का अधिकारी है।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अन्तर्धान हो गया, और फिर पेड़ पर चढ़ बैठा।

काञ्चीपुर नगर पर महाराजा चन्द्रगुप्त राज्य किया करता था। उनके दो जुड़वाँ बच्चे पैदा हुए। उन दोनों का उन्होंने कुश लव नाम रखे।

कुश और लव ने मेहनत से विद्याध्ययन किया और सोलह वर्ष की उम्र में ही दोनों ही बहुत बुद्धिमान हो गये। परन्तु दोनों का मन एक जैसा न था। कुश राजस स्वभाव का था और लव सात्विक स्वभाव का। इसलिए उनके पिता का ख्याल था कि कुश ही राजा बनने के योग्य था, लब नहीं।

एक बार कुश और लव में कोई बाद-विवाद चल पड़ा। दोनों फ़ैसले के लिए पिता के पास गये। पिता का तो कुश पर पक्षपात था ही; इसलिए उसने लव के विरुद्ध फ़ैसला ही न दिया, अपितु उसका अपमान भी किया। अपमानित होने के बाद, लव घर छोड़ कहीं चला गया।

जब से उसने घर छोड़ा था, उसका वैराग्य और भी बढ़ गया। उसने अपना नाम बदलकर 'अल्प' रखा। वह देश-देशान्तर में पर्यटन करने लगा।

एक रोज़ जब वह एक ब्राह्मणों के गाँव में से गुज़र रहा था, तो एक घर के बाहर कोई ब्राह्मण महाभारत का शान्ति पर्व पढ़ रहा था। गाँव के कुछ लोग बैठे सुन रहे थे। जब अल्प ने उस ब्राह्मण का भारत-पठन सुना, तो उसको और सुनने की इच्छा हुई। इसलिए वह भी वहाँ और लोगों के साथ बैठकर सुनने लगा।

महाभारत पढ़नेवाले व्यक्ति का नाम अग्निवर्मा था। उसकी सुरस नाम की एक सुन्दर लड़की थी। अग्निवर्मा उसका विवाह

श्री शिवकुमार पाण्डेय

करना चाहता था। परन्तु सुरस की जिद थी कि वह कुँवारी ही रहेगी। कइयो ने उसको कई तरह शादी करने के लिए कहा, पर उसने अपनी जिद न छोड़ी।

पठन ख़तम होते ही, अल्प ने अग्निवर्मा को नमस्कार करके कहा- "आपके पुराण-पठन से मेरा एक सन्देह दूर हो गया है। अब तक मैं यह सोचा करता था कि सन्यास ही एक मुक्ति मार्ग है। परन्तु अब में यह जान गया हूँ कि गार्हस्थ्य आश्रम, सन्यासाश्रम से कोई कम नहीं है।"

अल्प ने यद्यपि फटे-पुराने, मैले कपड़े पहन रखे थे, तो भी गौर से देखने पर वह बहुत सुन्दर और तेजस्वी लगता था। अग्निवर्मा ने पूछा-"बेटा! तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारे माँ-बाप कौन हैं। तुम्हारी जात क्या है?"

"मेरा नाम अल्प है; में और बातें नहीं जानता हूँ। धर्म के बारे में मुझे बहुत श्रद्धा है।" अल्प ने कहा।

"अगर तुम्हारा अपना कोई नहीं है, तो हमारे घर में ही रहो; रोज़ पुराण-पठन सुनो।" अग्निवर्मा ने कहा।

अल्प ने वहाँ रहना स्वीकार कर लिया।

सुरस भी, जिसने कभी भी किसी को आँख उठाकर न देखा था, अल्प को देखते ही दिल दे बैठी। जब उसने एक बार अल्प को गाँव से बाहर जाते देखा, वह भी बाल्टी और रस्सी लेकर पानी भरने, गाँव के बाहरवाले कुँए की ओर उसके पीछे पीछे गई।

कड़ी दुपहरी। बाहर कोई न था। एकान्त में सुरस ने अल्प से अपने मन की बात कही।

"तो तुम गुरु की लड़की हो। मेरी बहन के समान हो। तुम्हारा मुझे चाहना बहुत बड़ा

पाप है।" अल्प ने कहा। सुरस ने बहुत समझाया, पर कोई फायदा न हुआ। वह रोती रोती घर गई और पिता से उसने शिकायत की कि अल्प ने उसके साथ बलात्कार करने की कोशिश की थी।

अग्निवर्मा का विश्वास था कि उसकी लड़की पुरुष-द्वेषिणी थी; इसलिये उसने सोचा कि अल्प इसी दुरद्देश्य से उसके घर में रह रहा था। उसने जाकर ग्रामाधिकारी से फरियाद की।

ग्रामाधिकारी ने अग्निवर्मा, सुरस और अल्प को बुलवाया। उनसे पूछतलब की।

सुरस और उसके पिता की गवाही एक ही जैसी थी। अल्प ने अपने आप कुछ न कहा। जब उससे पूछा गया कि तुम अपराधी हो न? तो उसने "हाँ" कह दिया। "क्या तुम्हें सजा दी जानी चाहिये?" ग्रामाधिकारी ने जब पूछा, तो उसने कहा-"सज़ा दी जा सकती है।" "तुमने यह नीच कार्य क्यों किया?" पूछे जाने पर उसने कहा-"हुज़ूर, काम-वासना हर पाप के लिए रास्ता दिखाती है।"

कानून के अनुसार, अल्प के हाथ-पैर कटवाने की सजा दी जानी चाहिये थी;

परन्तु ग्रामाधिकारी के मन में यह सन्देह घर कर गया कि अल्प निर्दोषी है। सुरस के सिवाय इस दोषारोपण के लिए कोई और साक्षी न था। उसकी गवाही पर अविश्वास भी नहीं किया जा सकता था, क्योंकि सब जानते थे कि वह पुरुषों से द्वेष करती थी। ग्रामाधिकारी कोई निर्णय न कर सका। उसने यह फरिपाद उस प्रदेश के सामन्त के पास फ़ैसले के लिए भेजी। उस सामन्त का नाम था देववर्मा।

जब देववर्मा ने फ़रियाद से सम्बन्धित गवाहों के बयान की जाञ्च की, तो उसको आमाधिकारी पर गुस्सा आया। अल्प ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था। सुरस की पवित्रता के बारे में कोई भी शङ्का न थी। अल्प पर ही सन्देह किया जा सकता था। उस हालत में ग्रामाधिकारी ने उसको दण्ड क्यों नहीं दिया?

देववर्मा की एक लड़की थी, जिसका नाम यमुना था। वह बहुत ही चतुर थी। जब कभी देववर्मा को सन्देह होता तो वह अपनी लड़की से सलाह-मशवरा करता। उसने अग्निवर्मा की फरियाद के बारे में यमुना से कहा। उसने कहा -"जब तक

अग्निवर्मा, सुरस, और अल्प को बुलाकर, स्वयं पूछतलब नहीं की जाती है, तब तक यह न मालूम हो सकेगा कि आमाधिकारी ने दण्ड़ देने में क्यों सङ्कोच किया था।

तीनों को बुलाया गया। तीनों से सामन्त ने प्रश्न पूछे। उन्होंने वही गवाही दुहरा दी, जो उन्होंने आमाधिकारी के सामने दी थी। पर सामन्त को भी यह सन्देह हुआ कि अल्प निर्दोषी है। देववर्मा का मन, अल्प को दण्ड देने के लिए न माना। परन्तु निर्दोषी समझकर वह उसको छोड़ भी नहीं सकता था। उसने फिर अपनी लड़की से विचार विनिमय किया।

"जब तक इस मामले में, प्रत्यक्ष गवाही नहीं दी जाती, तब तक इसका फ़ैसला नहीं किया जा सकता।" यमुना ने अपने पिता से कहा।

"जो चीज़ कभी की गुज़र चुकी है, उसके बारे में यह गवाही कैसे तैयार की जा सकती है?" देववर्मा ने पूछा।

"यह काम मुझ पर छोड़ दो, पिता जी। फैसला देने के लिए, एक सप्ताह का समय लो। बाकी सब मैं स्वयं देख लूँगी।" यमुना ने हँसते हुए कहा।

यमुना ने अग्निवर्मा के रहने का इन्तजाम राज पुरोहित के घर किया, और सुरस को राज महल के एक कमरे में ही ठहराया। तुरन्त पिता के पास जाकर उसने कहा-"इस फरियाद में तुम और हम साक्षी हैं। आओ, अब देखने चलें।" कहते हुए वह अपने पिता को एक कमरे में ले गई। जब राजा ने किवाड़ के छेद में से देखा तो कमरे में, अल्प, शोक-मन-सा बैठा था।

इस बीच में, सुरस ने अपने कमरे को खूब छाना-बीना। वह कमरा खूब अच्छी तरह सजाया गया था। जहाँ देखो, वहीं

शीशे, दीप-स्तम्भ, अगरबती का धुँआ। परन्तु बहुत देर इन्तज़ार करने पर भी वहाँ कोई न आया। वह कमरे में घूमने लगी। एक दरवाजे के पास आकर उसने किवाड़ खटखटाया। क्योंकि किवाड़ में चटखनी न लगी थी, वह खुल गया। अगले कमरे में क्या है, यह देखने के लिए ज्योंही सुरस ने आगे कदम रखा, तो उसको सिर नीचे किये, कुर्सी पर अल्प बैठा दिखाई दिया।

सुरस ने इधर उधर देखा। किसी को वहाँ न पा, वह भागी भागी अल्प के पास गई। अल्प ने सिर उठाकर उसको देखा और फिर सिर नीचे कर लिया।

"अब तुम्हें सजा मिलकर ही रहेगी। तुम मुझे क्यों नहीं चाहते हो? क्यों वृथा अपने हाथ-पैर कटवाते हो? ग्रामाधिकारी के सामने तुम ही मान गये थे कि तुमने ग़लती की है। इसका मतलब कि तुम मुझ से प्रेम करते हो न? तुम मेरा प्रेम स्वीकार करो, तो मैं तुरन्त अपनी फरियाद बापिस ले लूँगी।" सुरस ने अल्प से कहा।

सब सुनकर, अल्प ने बिना सिर उठाये कहा-"जाओ, अब मुझे तुमसे बात करने की कोई ज़रूरत नहीं है, जाओ यहाँ से।"

यह सब देववर्मा और यमुना ने अपनी आँखों देखा। अगले दिन देववर्मा ने अपने दरबार में फ़ैसला सुनाया। फसले के अनुसार, सुरस दोषी थी और अल्प निर्दोषी।

"सुरस ने एक पर-पुरुष को चाहा ही नहीं, बल्कि उस पर निष्कारण, एक झूठा आरोप भी लगा कर, उसको दण्ड दिलवाना चाहा। तो भी मैं उसको बिना दण्ड़ दिये ही छोड़ देता हूँ।" देववर्मा ने कहा।

राजा ने अल्प को अपना अतिथि बनाकर यमुना के साथ उसका विवाह

करना चाहा। पहले पहल अल्प न माना। परन्तु जब उसको यह मालूम हुआ कि वह यमुना की बुद्धिमत्ता और प्रयत्न से ही, निर्दोषी सिद्ध हुआ था, तो वह मान गया। दोनों का धूमधाम से विवाह हुआ।

यह बात सुनते ही सुरस ने अपने पिता को उकसाते हुये कहा-"यह देववर्मा ने, अल्प को अपना दामाद बनाने के उद्देश्य से ही हमारी फरियाद रद्द कर दी है। क्योंकि मेरे साथ न्याय नहीं किया गया है, इसलिये सब मुझे ही बुरा भला कह रहे हैं। हमें सामन्त के खिलाफ महाराजा चन्द्रगुप्त से शिकायत करनी चाहिये।" अग्निवर्मा का तो विश्वास था कि उसकी पुत्री बहुत अच्छी थी, इसलिये उसने उसके कहने के अनुसार शिकायत की। महाराजा चन्द्रगुप्त ने देववर्मा और अल्प को अपने दरबार में बुलवाया। अल्प को देखते ही, वह पहचान गया कि वह उसका पुत्र लव ही था। वह आनन्दाश्रु बहाने लगा। क्योंकि लव के चले जाने के बाद, कुश बहुत मनमानी करने लगा था। चन्द्रगुप्त का यह ख्याल पक्का हो गया था कि वह राजा बनने योग्य न था, लव ही सचमुच शान्त स्वभाव के कारण, राज्य का अधिकारी था।

लड़का तो मिल गया था, पर वह एक अपराधी के रूप में उपस्थित किया गया था, इसलिये महाराजा चन्द्रगुप्त चिन्तित भी थे। इस सम्बन्ध में, यमुना ने विवरण सहित, अपनी चाल के बारे में राजा से कहा।

यह सुनते ही, सुरस के पिता अग्निवर्मा ने बैराग्य लेना निश्चय किया। वह वहीं से बन चला गया। घर भी न गया।

काञ्चीपुर का राज्य लब को दिया गया। वह यमुना के साथ बहुत दिनों तक उस राज्य पर राज करता रहा।

किसी जमाने में धीमन्त उज्जयिनी का राज्य करता था। वह बड़ा अमीर था। एक दिन धीमन्त के पास एक योगी आया। योगी को देखकर राजा ने पूछा-"क्या चाहिये?"

"महाराज! मेरे पास एक लोहे का लोटा, और एक डण्ड़ा है। उन्हें आपको बेचकर पैसे ले जाना चाहता हूँ।"

"कितने में बेचोगे?" राजा ने पूछा।

"लाख रुपये।" योगी ने कहा।

राजा ने न आगे देखा, न पीछे, मन्त्रियों की भी न सुनी। योगी को एक लाख रुपया देकर, उसकी दोनों चीज़ों को खरीद लिया। उस दिन रात को सोते ही धीमन्त को एक सपना आया। उसको एक स्त्री, जेवर-जवाहारतों से सजी, राज महल छोड़कर बाहर जाती हुई दिखाई दी।

"तू कौन है?" उसने स्त्री से पूछा।

"मैं धन-लक्ष्मी हूँ।" उस स्त्री ने उत्तर दिया।

"तू क्यों चली जा रही है?" राजा ने पूछा।

"लाख रुपये में, तूने एक टूटा-फूटा, लोहे का लोटा, और डण्ड़ा खरीदकर, क्यों मेरा अपमान किया है? मैं अब तेरे घर एक क्षण भी न रहूँगी।" धन- लक्ष्मी ने कहा।

"जा, जरूर जा। किसने रोका है?" राजा ने बेपरवाही से कहा।

दूसरे पहर, राजा को सपने में एक और स्त्री दिखाई दी। वह अच्छी हट्टी- कट्टी तन्दुरस्त मालूम होती थी, जवानी में थी।

"तू कौन है?" राजा ने पूछा।

"मैं बल-लक्ष्मी हूँ।" उसने कहा।

श्रीमती डी. मञ्जुलता

"क्यों जा रही है?" राजा ने पूछा।

"तुझे धन-लक्ष्मी ने छोड़ दिया है। तब तू मुझे कितनों दिनों तक रख सकेगा? मैं भी जा रही हूँ।" बल-लक्ष्मी ने कहा।

"जा, जरूर जा।" राजा ने कहा। तीसरे पहर, राजा को सपने में एक बूढ़ी दिखाई दी। वह भी राज महल छोड़कर जा रही थी। उसके सिर के बाल सफेद हो गये थे। परन्तु उसका मुँह अब भी चमचमा रहा था।

"तू कौन है?" राजा ने पूछा।

"में ज्ञान-लक्ष्मी हूँ।" उसने कहा।

"क्यों जा रही है?" राजा ने पूछा।

"बल लक्ष्मी के चले जाने के बाद, मेरे लिये भला यहाँ क्या जगह मिलेगी? मैं भी जा रही हूँ।" ज्ञान-लक्ष्मी ने कहा।

"जा, जरूर जा।" राजा ने बड़ी लापरवाही से कहा।

चौथे पहर, राजा को सपने में एक दिव्य स्त्री दिखाई दी। वह भी राज महल छोड़ कर जा रही थी। उसकी आँखें तेज़ के कारण चमक रही थीं।

"तू कौन है?" राजा ने पूछा।

"मैं धैर्य लक्ष्मी हूँ।" उसने कहा।

राजा ने उसका रास्ता रोककर पूछा-"तू क्यों जा रही है?"

"सब तुझे छोड़कर जा रहे हैं। तब मैं ही क्यों तेरे पास रहूँ?" धैर्य लक्ष्मी ने कहा।

राजा ने तुरन्त उसका हाथ पकड़कर कहा-"तुझे में न जाने दूँगा। अगर तू मेरे पास है, तो मेरे पास सब कुछ है।"

धैर्य लक्ष्मी ने हँसकर कहा-"अच्छा! तब से मैं तेरे पास ही रहूँगी।" राजा सन्तोष से आँखें खोलकर उठ बैठा।

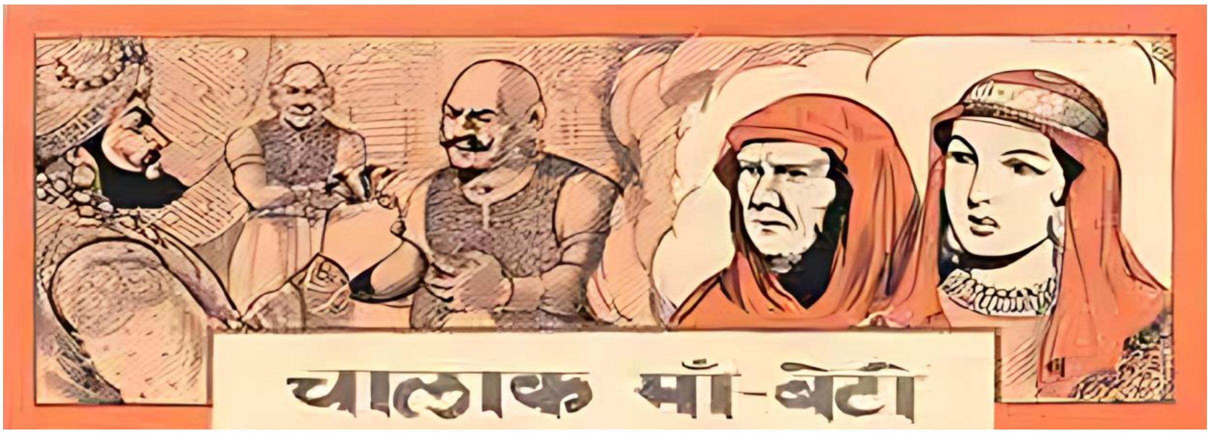

[३]

खालिद ने जब दिलैला से चोरी के बारे में पूछा तो उसने कहा-"आप क्या पूछ रहे हैं, मैं नहीं समझ पा रही हूँ। मैं तो यह भी नहीं जानती कि चोरी किसे कहते हैं।"

तब अन्धेरा हो चुका था। उस दिन उससे पूछ-तलब नहीं की जा सकती थी। उसने बहुत-सी करतूतें कर रखी थीं। बहुतों से पूछताछ करनी थी और वह अपना गुनाह मानने के लिए भी तैयार न थी। खालिद ने सोचा कि उसको जेल में रखा जाये, सवेरे होने पर फिर सुनवाई शुरू की जाय। परन्तु जेलर ने जिम्मेवारी लेने से इनकार किया। "यह बहुत चालाक चोर है। जैसे तैसे धोखा देकर, क़ैद से भाग निकलेगी।" उसने कहा।

"हाँ, यह तो ठीक है। सुनवाई शुरू होने तक उसको पाँच दस आदमियों के बीच में रखना ही अच्छा है।" खालिद ने कहा। वह घोड़े पर सवार होकर चला गया। पाँचों फरयादी, दिलैला को घसीटते हुए शहर के बाहर ले गये। वहाँ उसको खुली जगह में एक खम्भे से बाँधकर, पाँचों फरियादियों को पहरा देने के लिए कह, खालिद शहर वापिस चला गया। पाँचों ने उसके चारों ओर बैठकर, दिलैला को कोसा। परन्तु भोजन करते ही वे ऊँघने लगे, क्योंकि तीन रातों से, उन्होंने घड़ी भर भी आँखें बन्द न की थीं।

आधी रात के बाद, उस जगह दो व्यक्ति आये। एक शहर छोड़कर कहीं जा रहा था, और दुसरा शहर में जा

कुमारी रज़िया रेहाना

रहा था। दोनों ठहरकर आपस में बातचीत करने लगे। उन दोनों की बातें दिलैला को भी सुनाई पड़ रही थीं।

"बगदाद में, बताओ, ऐसी चीज़ कौन सी है, जिसका सब से अधिक मज़ा उड़ाया जा सकता है?" शहर में आनेवाले ने शहर छोड़कर जानेवाले से पूछा।

"मलाई से चिपुड़ी हुई, शहद की रोटियाँ। मैं शहर में तीन दिन रहा, और तीनों दिन यही रोटियाँ खाता रहा। उनके खाने से जी नहीं ऊबता, मर्जी होती है कि खाते जाओ।" शहर से जानेवाले ने कहा।

"अच्छा! चाहे कितना भी खर्च हो, मैं शहर में जितने दिन रहूँगा, ऐसी मलाई से चिपुड़ी हुई शहद की रोटियाँ ही खाऊगा।" शहर में आनेवाले ने कहा। जानेवाला चला गया। शहर में आनेवाला उस तरफ गया, जहाँ दिलैला बाँधी गयी थी।

दिलैला तो उनकी बातें सुन ही रही थी। उसको एक चाल यकायक सूझी। आनेवाला परदेशी था। वह नहीं जानता था कि वह कौन है। इसलिये आसानी से उसकी आँखों में धूल झोंकी जा सकती थी।

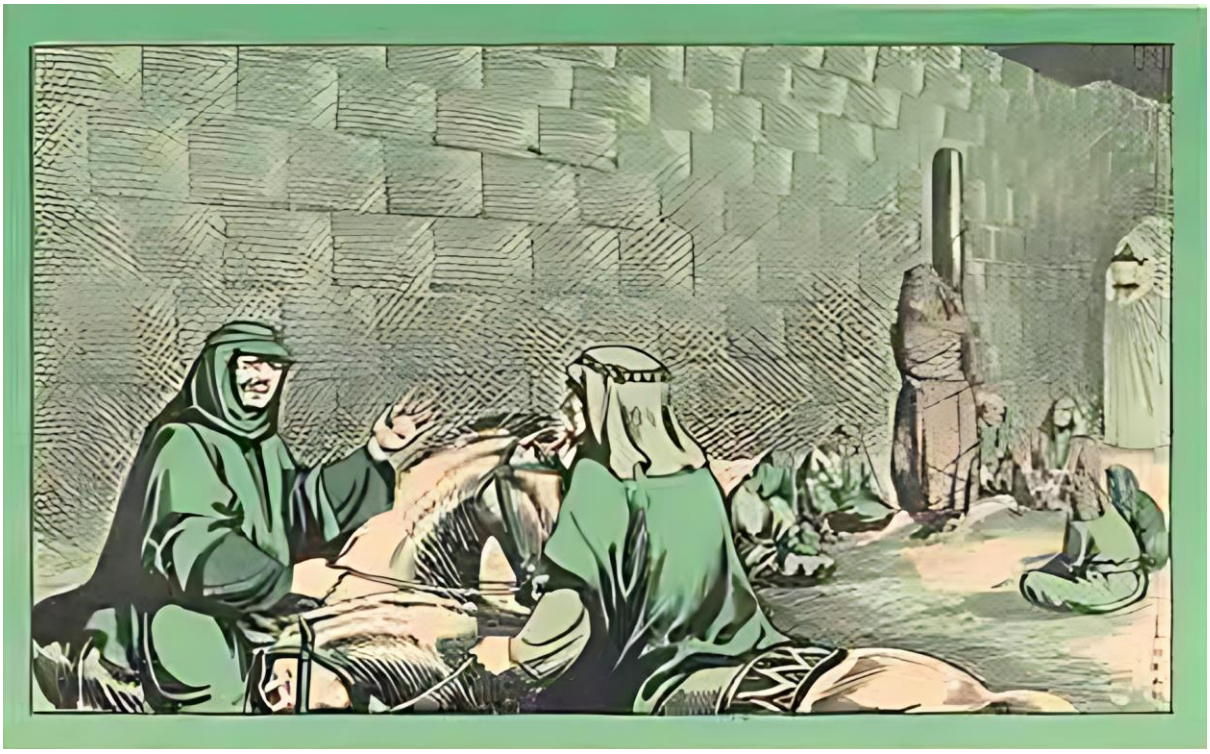

यह सोचकर दिलैला ने यह कहना शुरू कर दिया-"मुझे नहीं चाहिये। मैं नहीं खाऊँगी।" उस व्यक्ति ने घोड़े से उतर कर पूछा-"क्या बात है? तू कौन है? तुझे यहाँ क्यों बाँधा गया है?"

"क्या बताऊँ बेटा! मेरे पति ने, शहद की रोटियों पर मलाई चुपेड़कर बेचा, और लाखों रुपया बनाया। पहले पहल तो मुझे वे पसन्द थीं, पर बाद में में ऊब उठी। कुछ दिन पहले हमारी दुकान पर कई बड़े आदमी आये। मेरे पति ने उनके साथ मुझे भी शहद की रोटी खाने के लिये मज़बूर किया। मैंने रोटियों को मुँह में जो रखा तो ऐसा लगा, जैसे उल्टी आ रही हो। आये हुए लोगों को सन्देह हुआ कि रोटियों में कुछ है। वे बिना खाये ही चले गये। मेरे पति को पैसे तो मिले ही नहीं। अलावा इसके सारी रोटियाँ फालतू गई। पर इस में मेरा क्या कसूर है? मुझे शहद की रोटियों को खाने के लिये मजबूर करना, मेरे पति की गती थी। परन्तु उसने जाकर मेरी शिकायत की कि मैंने उसका कारोबार बिगाड़ा है। न्यायाधिकारी ने मुझे यह सजा दी है कि

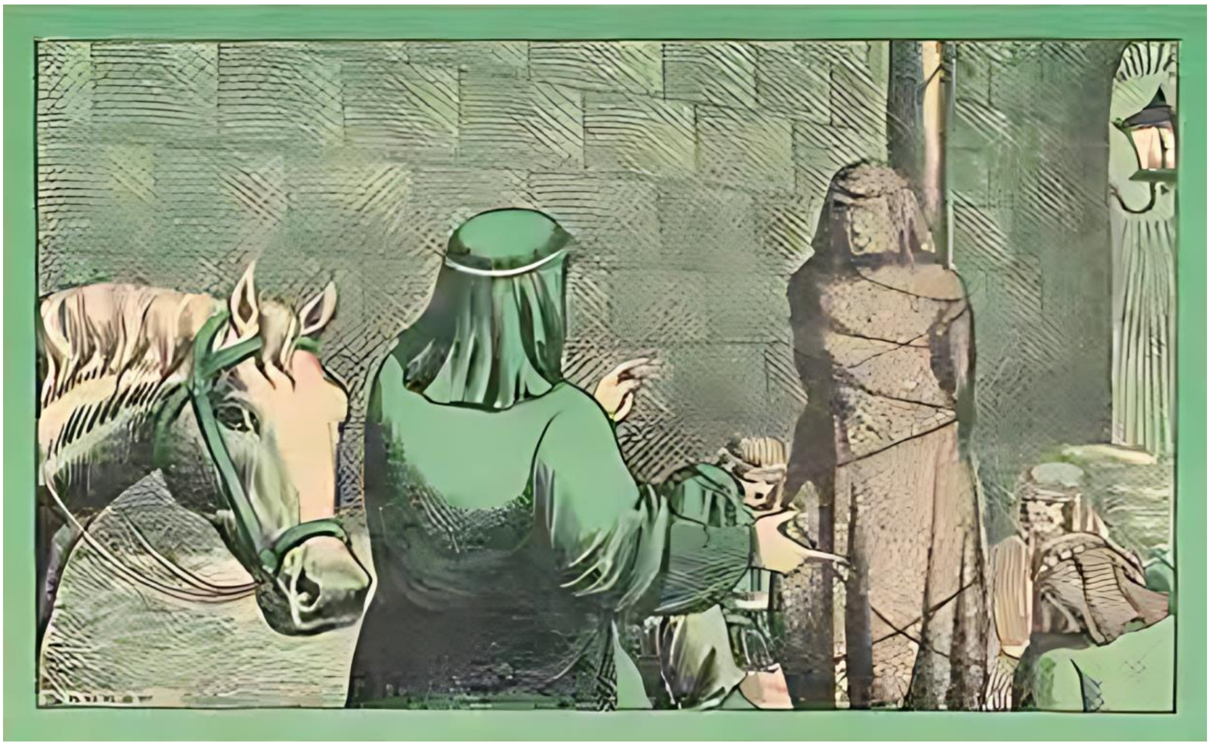

मुझे यहाँ बाँधकर शहद की रोटियाँ खिलाई जाएँ। सबेरे होते ही राजा के सिपाही मेरे लिये रोटियाँ लायेंगे। मैं उन्हें खा नहीं पाती।" दिलैला ने कहा।

"अरे नानी! काश यह मुसीबत मुझ पर जो आ पड़ती!" परदेशी ने कहा।

"बेटा, इसमें क्या रखा है? अगर तूने मुझे खोल दिया तो तुझे मैं अपनी जगह बाँध दूँगी। मेरी तरह तु भी मुँह पर परदा डाल ले। तुझे भी वे मलाई से चुपड़ी हुई शहद की रोटियाँ लाकर जबर्दस्ती खिलायेंगे।" दिलैला ने कहा।

यह सुन, परदेशी ने उसकी रस्सियाँ खोल दीं। दिलैला ने उसको अपनी जगह बाँध दिया। चेहरे पर परदा डाल दिलैला उसी के घोड़े पर चढ़कर बगदाद चली गई।

जब सवेरे, फरियादी उठे, तो वे यह जान कि दिलैला ही खम्भे पर बँधी है, गाली देने लगे। खम्भे पर बँधे व्यक्ति ने पूछा-"आखिर रोटियों क्यों नहीं आती हैं?" जब उन्होंने आँखें मलकर देखा, तो उन्हें पता लगा कि दिलैला उन्हें धोखा देकर फिर गायब हो गई है।

थोड़ी देर में खालिद वहाँ आया। उसने सब कुछ सुना। उसने सोचा कि यह उसके बस की बात न थी। वह सीधे खलीफा के पास गया।

खलीफा हसन अल रशीद ने सब की शिकायतें सुनीं। उसने यह भी वचन दिया कि जिन जिन को जो जो नुकसान हुआ है, वह खुद पूरा कर देगा। परन्तु पहले बुढ़िया को पकड़ना था। खलीफा ने वह जिम्मेवारी खालिद और मुस्तफा को सौपी।

खालिद ने अर्ज किया कि वह काम उसके बस में न था। खलीफा ने कहा-

"तब मुझे ऐसा आदमी बताओ, जो यह काम कर सकता हो।"

"जब से नये कोतवाल अहमद मुकर्रर हुए हैं, उन्होंने अभी तक किसी को नहीं पकड़ा है। इस बुढ़िया को वे ही पकड़ सकते हैं।" खालिद ने कहा।

खलीफा ने अहमद को बुलवाया, और उसको सारी कहानी सुनाकर, हुक्म दिया कि वह दिलैला को पकड़े। अहमद झट अपने चालीस सिपाहियों के साथ, दिलैला को ढूँढने निकल पड़ा। उन सिपाहियों के सरदार का नाम था, गुनी अलि। उसने अपने सरदार अहमद से कहा-"हुजुर! मेरा यह ख्याल है कि इस मामले में, हसन साहब की मदद लेना अच्छा होगा।"

"अरे गूनि! हम और हमारी कोई मदद करे? हम कोई बुड़बुक हैं क्या? अगर फिर ऐसी बात मुँह से निकली तो जवान निकलवा दूँगा।" अहमद ने इस तरह कहा कि हसन भी सुन ले।

हसन तो पहले ही जल रहा था कि दिलैला को पकड़ने के लिए खलीफा ने उसको मुकर्रर नहीं किया था।

अब वह अहमद की बातें सुनकर, और भी खौल उठा। उसने सोचा- "देखें मेरी मदद के बगैर ये कैसे दिलैला को पाते हैं।"

चालीस सिपाहियों को, राजमहल के बाहर खड़ा कर अहमद ने कहा- "बहादुरो! मैं तुम्हें चार टोलियों में बाँट रहा हूँ। चारों टोलियाँ शहर के चारों मोहल्लों की छानबीन करेंगी। कल दुपहर तक, हम मुस्तफा गलीवाली सराय में मिलेंगे। तब मैं खुद आकर तुमसे बातचीत करूँगा।"

चारों टोलियों के चले जाने के बाद, अहमद भी खुद ढूँढने निकल पड़ा।

दिलैला यह जानकर जरा भी न डरी कि खलीफा ने उसको पकड़ने के लिए अहमद को नियुक्त किया है। उसने अपनी लड़की से कहा-"बेटी! हसन के सिवाय मुझे और कोई नहीं पकड़ सकता। यह हमारी किस्मत अच्छी हैं कि खलीफा ने हमें पकड़ने के लिए उसको नहीं कहा। अहमद को तो तुम भी आटे दाल का भाव बता सकती हो।"

"तो क्या मैं इन इकतालीस आदमियों को धोखा देकर आऊँ?" जीनाव ने अपनी माँ से पूछा।

"हाँ, जाओ बेटी!" दिलैला ने कहा। जीनाब ने अपने को खूब सजाया-सँवारा। बहुत ही महीन रेशमी ओढ़नी ओढ़कर, वह मुस्तफ़ा गलीवाली, हज करीम की सराय में गई। हज़ करीम के पास जाकर उसने कहा-"मेरे कुछ खास दोस्त आ रहे हैं। आप अपना बड़ा हॉल एक दिन किराये पर दीजिये। पाँच दीनार दूँगी।"

करीम ने कहा-"किराये बगैरह की कोई जरूरत नहीं है। यह काफी है, अगर अतिथि मेरी शराब खरीदें।"

"उसमें कोई पीछे नहीं रहेगा। सब अच्छे पीनेवाले हैं।" जीनाब ने कहा। वह अपने घर से कालीन, कुर्सी, चारपाई, बिस्तरें, बर्तन वगैरह सब ले आई। खाने पीने की चीजें भी वहाँ रख, वह सराय के बाहर, पहरे पर खड़ी हो गई। थोड़ी देर बाद, गुनी अलि नौ सिपाहियों के साथ, शान से वहाँ आया। जीनाब ने उसे देखकर पूछा-"क्या आप ही अहमद हैं?"

"नहीं तो, मुझे गुनी अलि कहते हैं।" अलि ने कहा।

"अच्छा! आप सब आकर मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिये।" कहती हुई वह उनको हॉल में ले गई। वे सब के सब शराब के पीपे के चारों ओर खड़े होकर शराब निगलने लगे। क्योंकि शराब में जीनाव ने भङ्ग मिला दी थी, इसलिये उसके पीते ही, दसों आदमी, सुध-बुध खो, नीचे गिर गये। उनमें से एक एक को पैर से पकड़कर वह सहन में घसीट कर ले गई। उनका एक ढेर-सा लगाकर एक कपड़ा डाल, हॉल को फिर पहले जैसे साफ़ करवाकर, वह सराय के बाहर खड़ी हो गई।

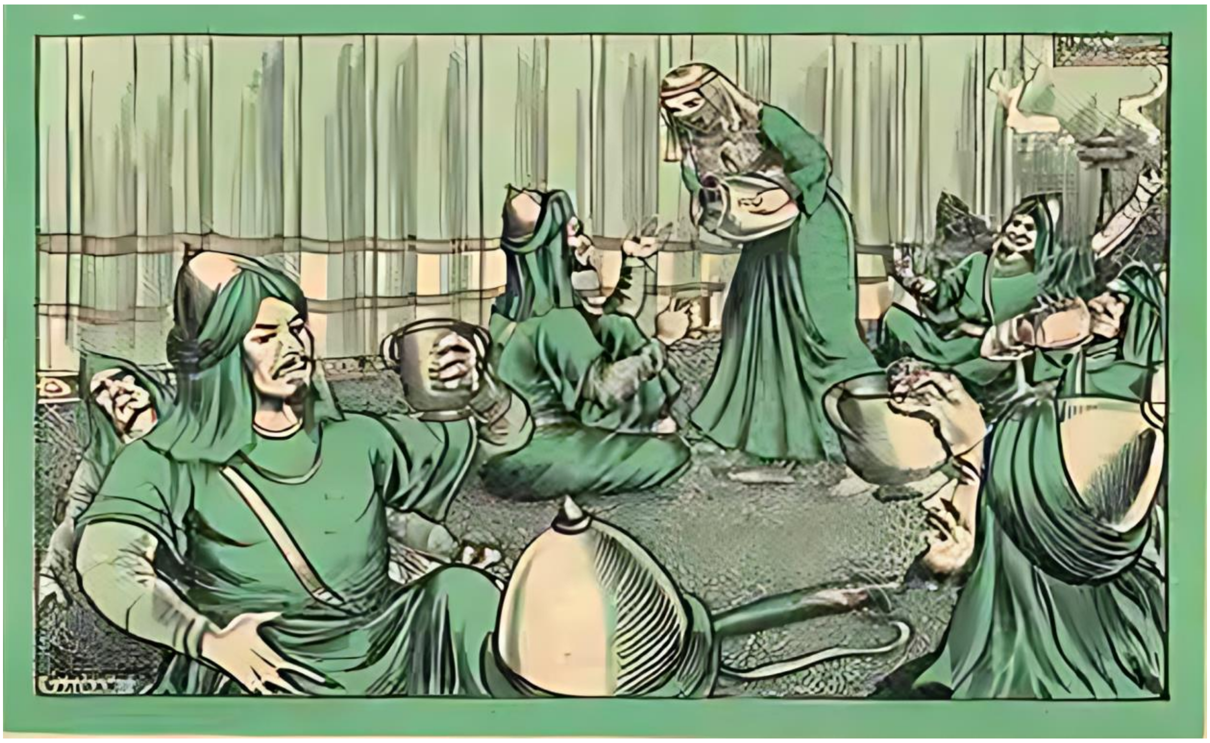

थोड़ी देर बाद, अहमद के और दस सिपाही आये। जीनाव उनको भी अन्दर ले गई। उन्हें उसने खूब खिलाया पिलाया और जब वे बेहोश गिर गये, तो उनको भी सहन में घसीट दिया। जल्दी ही, चालीस सिपाहियों की यही हाल हुई।

आखिर घोड़े पर सवार हो अहमद खुद आया। जीनाव को सराय के बाहर खड़ा देख उसने उससे पूछा- "क्यों री लड़की? क्या तूने मेरे सिपाही देखे हैं?"

"क्या आप ही कोतवाल अहमद हैं? इस गली के सिरे पर सुनते हैं कि आपके सिपाहियों को कोई बुढ़िया दिखाई दी। उन लोगों ने मुझसे यह कहने के लिये कहा है कि वे उसे पकड़ने गये हैं। आइये, आप इस बीच में मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिये।" जीनाव ने कहा।

अहमद ने खुशी खुशी पीना शुरू किया, पर भङ्ग के असर से वह भी नशे में मूर्छित सा हो गया। जीनाब ने उसके कपड़े उतार लिये। गहने भी ले लिये। उसने बाकी चालीस आदमियों के कपड़े भी ले लिये। कपड़ों को अहमद के घोड़े पर लाद वह घर चली गई।

अहमद और उसके चालीस सिपाही दो दिन और दो रात बीतने के बाद उठे। पहले तो वे यह न जान सके कि वे कहाँ थे। पर जब थोड़ा बहुत मालूम होने लगा, तो वे जान गये कि किसी ने उनको खूब चकमा दिया है। वे शर्मिन्दा हुए। अहमद इस सोच में था कि बिना कपड़ों के बाहर गली में कैसे जाया जाय? बनियन और जँघिया पहिनकर, पहले तो अहमद बाहर निकला, फिर उसके पीछे पीछे उसके चालीस आदमी।

(अभी और है)

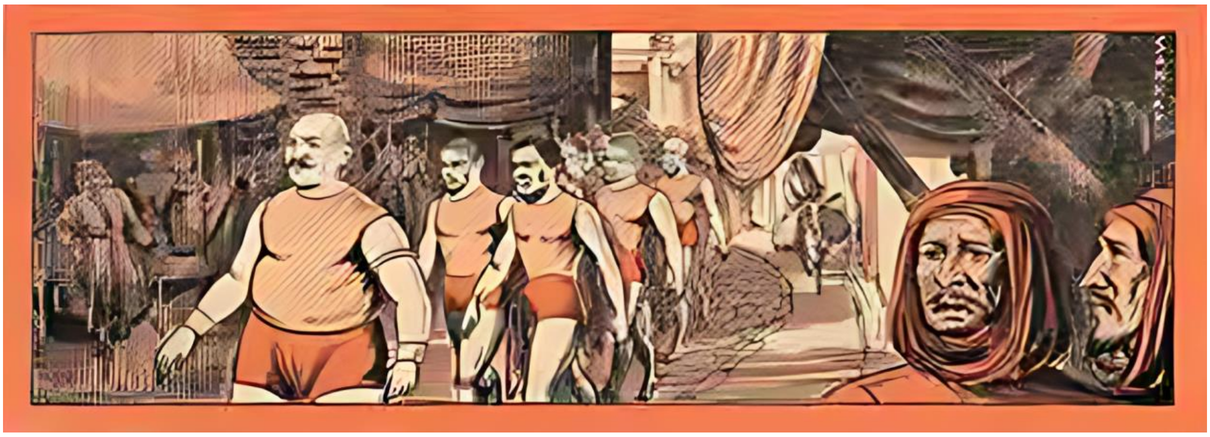

मेहनत का मूल्य

किसी देश में एक गरीब ब्राह्मण रहा करता था। उसके पास सिवाय एक छोटे से घर, और उसके साथ लगे छोटे-से सहन के, कुछ न था। इसलिये रोज वह घूम-फिरकर भिक्षा माँगा करता। जब उसको अपने और पत्नी के भोजन के लायक चावल मिलते, तो वह घर चला आता। पत्नी उन चावलों को पकाती। अगर घर के सहन में कोई शाक-सब्जी लगी होती, तो उसे बनाकर वे खाते-पीते।

ब्राह्मण बूढ़ा हो गया। भीख माँगने भी न जाता था। तब उसकी पत्नी ने एक दिन कहा-"आप कभी भी कल के बारे में सोचने की गलती नहीं करते। अगर हम पहले से ही बुढ़ापे के बारे में होशियार हो जाते, तो आज हमारी यह गति न होती। सुनते है, राजा दानी है। आप माँगे तो वे हमारी गरीबी दूर कर देंगे।"

ब्राह्मण, पत्नी की सलाह पर राजा के पास जाकर, आशीर्वचन पढ़ने लगा। राजा ने पूछा-"क्या चाहिये, माँगो।"

"महाराज! आप धनी सम्पन्न हैं, पर मैं आपकी सम्पत्ति का कोई भाग नहीं माँगता। अगर अपनी मेहनत से कुछ कमाया धमाया हो, तो उस में से थोड़ी बहुत भिक्षा दीजिये।" ब्राह्मण ने कहा।

राजा के पास बहुत सम्पत्ति थी, पर उस में से एक दमड़ी भी ऐसी न थी, जो उसने स्वयं कमाई थी। अगर वह ब्राह्मण को कुछ देना चाहता तो उसके लिये उसे पैसा कमाना था। राजा ने थोड़ी देर तक सोचकर अमण से कहा-"अच्छा, तो कल शाम को आना।"

ब्राह्मण पर चला गया। अगले दिन सवेरे, राजा मैले कपड़े पहन कर, कुली का काम करने निकल पड़ा। वह थोड़ी दूर ही गया था कि उसको गली में कुम्हार घड़े बनाता दिखाई दिया।

"क्यों भाई! मुझे कोई काम दे सकोगे?" राजा ने कुम्हार से पूछा।

"अच्छा तो तू मिट्टी मिला। शाम तक अगर तूने काम किया तो तुझे चार कसोरे दूँगा।" कुम्हार ने कहा।

राजा मान गया। परन्तु वह काम ठीक तरह न कर सका। मिट्टी मिलाते मिलाते, वह बहुत थक गया। कुम्हार ने यह सब देखते हुए कहा- "भला, यह काम तू क्या कर सकेगा? जा वे जा! वचन दिया था, इसलिये ले जा ये कसोरे। फिर कभी मजदूरी के लिये न आना।" राजा को डॉट उपककर कुम्हार ने चलता किया।

ब्राह्मण अगले दिन शाम को दरबार में पहुँचा। राजा ने उसके हाथ में चार कसोरे रखते हुए कहा-"यह ही मेरी मेहनत का फल है।" "ये ही मेरे लिये दस हज़ार हैं महाराज।"

ब्राह्मण, राजा को आशीर्वाद देकर घर चला गया।

ब्राह्मण की पत्नी इस प्रतीक्षा में थी कि उसका पति, राजा के पास से गाड़ियों पर दान लादकर ला रहा होगा। पर उसको खाली हाथ आता देख उसने पूछा-"क्यों! क्या हुआ?"

"मैं उनका दान ले आया हूँ। यह लो चार कसोरे।" ब्राह्मण ने उन्हें पत्नी के हाथ में रख दिये।

उनको देखते ही, ब्राह्मण की पत्नी गरज उठी-"यह तो हीरों की खान से पत्थर लानेवाली बात हुई। राजा के पास से क्या इन्हें ही लाया जाता है?"

उसकी पत्नी ने चारो कसोरे उसके देखते देखते सहन में फेंक दिये।

तब अन्धेरा हो चुका था। ब्राह्मण ने उनको सवेरे खोजने की सोची। सवेरे उसने बहुत खोजा, पर वे कसोरे न मिले। परन्तु चार विचित्र पौधे जरूर उसको दिखाई दिये। देखते देखते वे चारों पौधे बड़े होने लगे, फलने-फूलने भी लगे। जब ब्राह्मण की पत्नी ने उन्हें शाक के लिये काटा, तो उनमें मोतियाँ भरी हुई थीं। गरीब ब्राह्मण अपनी आँखों पर विश्वास न कर सके। जब उन्होंने मोतियों को ले जाकर सुनार और जौहरियों को दिखाया तो उन्होंने कहा कि वे कीमती थे।

इतने दिनों बाद, उस ब्राह्मण परिवार की गरीबी दूर हुई। चारों पौधे, कल्पवृक्ष की तरह रोज फल देते, और ब्राह्मण उन्हें हर किसी को दान दे देते।

थोड़े दिनों बाद, राजा को इस ब्राह्मण के बारे में मालूम हुआ। राजा यह नहीं सोच पा रहा था कि वह ब्राह्मण, जिसने उसके पास से चार कसोरे ही पाये थे, कैसे यकायक इतना धनी हो गया। यह जानने के लिये वह ब्राह्मण के घर गया।

"महाराज! आपने मुझे जो चार कसोरे दिये थे, मैंने उन्हें खर्चा नहीं। मैंने अपनी पत्नी को दिया तो उसने उन्हें आँगन में फेंक दिया। अगले दिन सवेरे वे ढूँढे भी न मिले, पर वहाँ विचित्र वृक्ष दिखाई दिये। उनके कारण हमारा दारिद्य दूर हो गया।" ब्राह्मण ने बताया।

मेहनत का मूल्य क्या होता है, राजा जान गया। राजा ने उसके दूसरे ही दिन यह आज्ञा निकाली कि राज्य में सब मेहनत करके ही अपनी रोजगारी करें। वह भी स्वयं मेहनत करने लगा।

CHANDAMAMA (Hindi) APRIL 1956 Regd. No. M. 5452

रंगीन चित्र-कथा चित्र — ३